# नया शगूफा : 'एक देश-एक चुनाव'

**योगेन्द्र यादव**

भारत शगूफों का देश है। यह सच प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी से बेहतर कोई नहीं जान पाया है। देश में महंगाई हो या बेरोजगारी, अडानी का घोटाला हो या फिर हमारी जमीन पर चीन का कब्जा। आप चिंता न करें, बस एक नया शगूफा छोड़ दीजिए 'एक देश एक चुनाव।' टी.वी. चैनलों को इशारा कर दीजिए। जनता अपनी बदहाली को भूलकर नया तमाशा देखने जुट जाएगी। उधर खेल खत्म, वोट हजम!

आगामी लोकसभा चुनाव से 8 महीने पहले 'एक देश एक चुनाव' के नाम से लांच किए गए इस शगूफे की असलियत जानने के लिए जरूरी है कि हम इस रंगीन लिफाफे को खोलकर इसकी 8 भ्रांतियों की शिनाख्त करें और पूरा सच समझें।

पहली भ्रांति- 'एक देश एक चुनाव' एक साधारण-सा प्रशासनिक सुधार है जो देश के चुनावी कैलेंडर की एक खामी को दुरुस्त कर देगा।

पूरा सच- जी नहीं, यह कोई छोटा-मोटा प्रशासनिक सुधार नहीं है। लोकसभा के साथ-साथ सभी विधानसभाओं के चुनाव करवाना हमारे संवैधानिक ढांचे को बुनियादी रूप से बदल देगा। यह बहुत बड़ा संविधान संशोधन होगा।

दूसरी भ्रांति- देश की एकता और चुनाव में एकरूपता के लिए यह एक स्वाभाविक कदम है।

पूरा सच- यहां 'एक चुनाव' का मतलब एक साथ चुनाव है। इसका एकता या एकरूपता से कोई संबंध नहीं है। दरअसल देश में जिस चुनावी एकरूपता की जरूरत है वह है पंचायत और नगरपालिका के चुनाव में प्रयोग होने वाली मतदाता सूची वही हो जोकि लोकसभा तथा विधानसभा चुनाव में इस्तेमाल होती है। लेकिन इस प्रस्ताव में उस जरूरी एकरूपता के लिए कोई स्थान नहीं है।

तीसरी भ्रान्ति- यह एक सर्वमान्य प्रस्ताव है जिस पर बहुत समय से राष्ट्रीय सहमति बनी हुई है।

पूरा सच- यह प्रस्ताव पिछले चार दशक में बार-बार पेश किया गया है। समय-समय पर कई सरकारी कमेटियों और चुनाव आयोग ने इसका समर्थन किया है, लेकिन इस बार की तरह हर बार इसका कई दलों और विशेषज्ञों द्वारा विरोध हुआ है। इतने बड़े संवैधानिक बदलाव को सर्वदलीय सहमति के बिना लागू करना लोकतंत्र के लिए खतरनाक है।

चौथी भ्रांति- संविधान लागू होने के बाद शुरू में 'एक देश एक चुनाव' के आधार पर चुनाव हुए थे। बाद में चुनाव चक्र अलग-अलग होने से विकृति पैदा हो गई।

पूरा सच- लोकसभा और विधानसभा के चुनाव का अलग-अलग समय पर होना कोई विकृति नहीं है, बल्कि हमारे संवैधानिक ढांचे के दो मूलभूत तत्वों (संसदीय लोकतंत्र तथा संघीय व्यवस्था) की स्वाभाविक परिणति है। शुरूआत में दोनों चुनाव एकसाथ होने ही थे। चूंकि आरम्भ ऐसे ही होना था क्योंकि ऐसा कोई नियम नहीं था। कालांतर में इन दोनों चुनाव चक्रों का अलग-अलग होना स्वाभाविक था। संविधान निर्माता यह जानते थे। इसमें कोई विकृति नहीं है जिसका इलाज करने की जरूरत है।

पांचवीं भ्रांति- एक साथ चुनाव करवाने से सरकार का चुनावी खर्च बहुत कम हो जाएगा।

पूरा सच- जाहिर है अलग-अलग चुनाव करवाने की बजाय एक साथ दोनों चुनाव करवाने से सरकारी खर्च में बचत होगी, लेकिन कितनी? ज्यादा से ज्यादा इस तरीके से अगले 5 साल में 5,000 करोड़ रुपए की बचत हो सकती है। यह राशि अगले 5 साल के केंद्रीय बजट का 0.02 प्रतिशत होगी यानी 100 रुपए में से दो पैसे के बराबर। पार्टियां और उम्मीदवार चुनाव में जितना खर्च करते हैं उसके मुकाबले में यह सरकारी खर्च आटे में नमक के बराबर भी नहीं है।

छठी भ्रांति- बार-बार चुनाव होने से आचार संहिता के चलते सरकारी कामकाज रुका रहता है। सरकारों पर हर वक्त चुनाव का दबाव बना रहता है। इस समस्या का यही एक निदान है।

पूरा सच- इस बात में कुछ सच्चाई है, लेकिन इस समस्या के निदान के लिए ज्यादा आसान तरीके हैं। फिलहाल 5 साल में कम से कम 8 बार बड़े राज्य चुनाव होते हैं। इसे कम करने के लिए चुनाव आयोग को यह अधिकार दिया जा सकता है कि वह किसी एक साल में पडऩे वाले सभी राज्यों के चुनाव एक साथ करवा ले।

आचार संहिता संशोधन होना चाहिए ताकि केंद्र सरकार के वे सब फैसले न रुकें जिनका उस राज्य से कुछ विशेष संबंध नहीं है। राज्य चुनावों को कई राऊंड में करवाने की बजाय एक या दो राऊंड में करवाने से चुनाव की अवधि भी छोटी की जा सकती है।

सातवीं भ्रांति- अगर इस प्रस्ताव से कुछ फायदा नहीं तो कोई नुक्सान भी नहीं है। पूरा सच- नुक्सान यह है कि संसदीय लोकतंत्र का ढांचा टूट जाएगा। अगर किसी राज्य में सरकार विधानसभा में बहुमत का विश्वास खो बैठती है और किसी अन्य पार्टी को बहुमत नहीं है तो ऐसे में क्या किया जाएगा?

क्या 5 साल पूरे होने तक उस सरकार को चलने दिया जाएगा जो बजट पास नहीं करवा सकती, पैसा खर्च नहीं कर सकती? या कि विधानसभा को भंग कर कई साल तक राज्यपाल का शासन चलेगा? और अगर ऐसा केंद्र में हुआ तो क्या होगा? यह लोकतंत्र के साथ खिलवाड़ है।

आठवीं भ्रांति- यह चुनाव सुधार की सच्ची कोशिश है। इसका राजनीति से कोई लेना-देना नहीं है।

पूरा सच- अगर राजनीति से कोई लेना-देना नहीं है तो पिछले 25 साल में बार-बार सिर्फ भाजपा और उसके नेता ही इस प्रस्ताव की वकालत क्यों करते रहे हैं? जाहिर है अगर लोकसभा और विधानसभाओं के चुनाव एक साथ होंगे तो राष्ट्रीय चुनाव का माहौल होने से विधानसभा चुनाव में

भी बड़ी राष्ट्रीय पार्टी को अतिरिक्त वोट मिलेंगे। आज के संदर्भ में जाहिर है इसका सबसे ज्यादा फायदा भाजपा को होगा। यूं भी सोचिए अगर इस प्रस्ताव के पीछे विशुद्ध राजनीतिक सुधार की मंशा होती तो यह समिति 2019 में क्यों नहीं बन गई, जब प्रधानमंत्री ने इस प्रस्ताव की वकालत की थी?